

गृह्यसूत्रों में वर्णित विवाह संस्कार

आकांक्षा निगम

शोधच्छात्रा, संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

शोधसार

प्राचीन काल से ही मानव जीवन में संस्कारों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मनुष्य के व्यक्तित्व एवं चारित्रिक विकास में संस्कारों का प्रथम स्थान रहा है। सामाजिक जीवन को सफल, सुसंगठित एवं अनुशासित बनाने के लिए वर्ण और आश्रम के साथ-साथ संस्कारों की भी व्यवस्था है। मनुष्य की अभिवृद्धि में संस्कारों का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण एवं लाभकारी योगदान रहा है। इन संस्कारों से संस्कारवान मनुष्य सुख-समृद्धि एवं आरोग्य की कामना करते हैं। श्रुति और स्मृतियों में कथित जिन कर्मों से मनुष्य को संस्कृत अथवा परिष्कृत किया जाता है, वे संस्कार कहलाते हैं।

प्राचीन भारतीय सामाजिक जीवन में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसके माध्यम से व्यक्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। प्राचीन भारतीय मान्यताओं के अनुसार, तत्कालीन समाज में विवाह की संकल्पना एवं आवश्यकता की अनुभूति की गई, जिसके माध्यम से कुटुम्ब में स्थायित्व स्थापित हो सका है तथा विवाह के पश्चात् दम्पति न केवल गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगे अपितु स्वस्थ सामाजिक परम्परा का निर्वाह करने लगे और अपना योगदान भी देने लगे।

बीज शब्द- भारतीय संस्कृति, भारतीय सामाजिक जीवन, षोडश संस्कार, विवाह संस्कार, पाणिग्रहण, सप्तपदी, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र।

प्रस्तावना

संस्कारों का उद्देश्य मानव की भौतिक और सांस्कृतिक उन्नति करना ही नहीं अपितु उसकी शुद्धि करना भी है। संस्कारों का उदय वैदिक काल में ही हो गया था। शास्त्रों में तो प्रमुख 48 संस्कार बताए गए हैं। जिनमें से 16 संस्कार ही प्राचीन काल से वर्तमान समय तक प्रचलित रहे हैं।

“गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।

नामक्रिया निष्क्रमोऽन्नप्राशनं वपनक्रिया॥

कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः।

केशान्त स्नानमुद्राहो विवाहग्निरिग्रहः॥

त्रेताग्निसङ्ग्रहश्चेति संस्काराः षोडशः स्मृताः”¹

विवाह संस्कार समस्त संस्कारों में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण एवं गौरवशाली माना जाता है। इस संस्कार में मनुष्य ब्रह्मचर्याश्रम से गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। गृहस्थाश्रम अन्य तीनों आश्रमों की अपेक्षा श्रेष्ठतम माना जाता है।

विवाह शब्द ‘वि’ उपसर्गपूर्वक ‘वह्’ धातु में ‘घञ्’ प्रत्यय करने से निष्पन्न हुआ है। जिसका तात्पर्य है- ‘विशिष्ट वहनम्’। अर्थात् विशिष्ट मंत्रोच्चारण के माध्यम से विशिष्ट सप्तपदी द्वारा कन्या का अपनी पत्नी रूप में वरण करना। ‘शब्द कल्पद्रुम’ नामक ग्रन्थ में विवाह को ‘विशिष्ट वहनम्’ बताया गया है।² ताण्ड्य महाब्राह्मण के अनुसार, स्वर्ग और पृथ्वी ने पारस्परिक सहयोग हेतु

विवाह किया।³ विवाह के लिए अनेक शब्द प्रयुक्त होते हैं, जैसे- उद्वाह, परिणय, उपयम्, पाणिग्रहण आदि शब्द विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उद्वाह शब्द से तात्पर्य वधू को उसके गृह से ले जाने से है। उपयम् से आशय किसी को निकट से अपना बनाने से है। सामाजिक सर्वाधिक प्रचलित शब्द पाणिग्रहण का तात्पर्य वधू का हाथ ग्रहण करने से बताया गया है। हेमचन्द्र ने पाणिग्रहण का अर्थ 'उढायाम्' सूत्र से किया है। उन्होंने इसकी व्याख्या 'पाणिग्रहीत' शब्द से की है। पाणिग्रहण द्वारा वर- वधू का वरण करता है। विवाहोपरान्त पत्नी को 'पाणिग्रहीता' शब्द से संबोधित किया जाता है।

पाणिग्रहीति प्रकारः शब्दा उढाया स्त्रियाङ्यन्ता निपात्यान्ते।

यथा- पाणिग्रहीतोऽस्याः पाणौ वा गृहीता पाणिग्रहीति एव करगृहीति।⁴

ऋग्वेदानुसार, गृहस्थ होकर देवों के लिए यज्ञ करना तथा संतान की उत्पत्ति करना ही विवाह है।⁵ पाश्चात्यकालीन साहित्य में भी यही तथ्य पाए जाते हैं। विवाह संस्कार का सर्वप्रथम उल्लेख विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में यह सूर्य और सोम के विवाह रूप में प्राप्त होता है। ऋग्वेदीय ऐतरेय ब्राह्मण में पृथ्वी और सूर्य आदि के विवाह रूप में प्राप्त होता है।

विवाह का महत्त्व - मानव जीवन में विवाह का अत्यधिक महत्त्व है। बृहदारण्यकोपनिषद् में एक उद्धरण से ज्ञात होता है कि आरंभ में पुरुष के आकार की आत्मा थी। उसने भलीभांति अवलोकन करने पर भी आत्मा से भिन्न पदार्थ अथवा अवयव नहीं देखे, उसने कभी रमण नहीं किया क्योंकि कोई भी व्यक्ति एकाकी रमण नहीं करता। उसको दूसरे साथी की चाह हुई, तो उसने उसी आत्मा को दो भागों में विभक्त कर दिया, वे दो भाग ही पति और पत्नी बने।⁶ रामायण में पति और पत्नी को एक ही रथ के दो पहिए बताया गया है। जिस प्रकार तारों के बिना वीणा नहीं हो सकती, चक्र बिना रथ नहीं हो सकता, उसी प्रकार पति बिना स्त्री का जीवन सुखमय नहीं हो सकता अथवा व्यर्थ है।⁷

विवाह संस्कार का हिन्दू संस्कारों में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। अधिकांशतः गृह्यसूत्रों का आरंभ विवाह संस्कार से ही हुआ है क्योंकि यह समस्त संस्कारों एवं गृह्यकर्मों का उद्गम अथवा केंद्र है। विवाह स्वयं एक यज्ञ है। जो व्यक्ति विवाह न करके गार्हस्थ जीवन में प्रवेश नहीं करता, उसको यज्ञहीन कहा जाता है।⁸ एकाकी पुरुष अधूरा माना है और उसकी पत्नी को उसका अर्धभाग माना जाता है, इसीलिए पत्नी को अर्धांगिनी कहा जाता है।⁹ मनुष्य को पितृ ऋण, देव ऋण और ऋषि ऋण से मुक्त होना बताया गया है। जब तीन ऋणों के सिद्धांत का विकास हुआ, तो विवाह को अत्यधिक महत्त्व और पवित्रता प्राप्त होने लगी क्योंकि बिना विवाह के संतानोत्पत्ति द्वारा पितृ ऋण से मुक्त होना असंभव था।¹⁰ चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की पूर्ति भी गृहस्थाश्रम में ही संभव है।

मेधातिथि के अनुसार, विवाह कन्या को अपनी पत्नी बनाने हेतु निश्चित क्रम से की जाने वाली अनेक विधियों द्वारा सम्पादित किया गया, 'पाणिग्रहण' संस्कार है। जिसकी अंतिम विधि सप्तर्षि दर्शन है।¹¹

विवाह के प्रकार - विवाह की विवेचना स्मृति ग्रन्थों, धर्मसूत्रों, गृह्यसूत्रों आदि ग्रन्थों से होती है। मनुस्मृति में जो विवाह के आठ प्रकार बताये गये हैं, वे आज भी इतिहास और शास्त्र वेत्ताओं को मान्य हैं।

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः ।

गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥¹²

आश्वलायन गृह्यसूत्र में आठ प्रकार के विवाह का उल्लेख किया गया है। गौतम धर्मसूत्र में भी विवाह के आठ प्रकारों का वर्णन हुआ है।¹³ आपस्तम्ब धर्मसूत्र में प्राजापत्य और पैशाच विवाह के अतिरिक्त विवाह के छः भेदों का उल्लेख है।¹⁴ याज्ञवल्क्य ने राक्षस और पैशाच विवाह को छोड़कर विवाह के छः भेदों का वर्णन किया है।¹⁵ बौधायन धर्मसूत्र में आठ प्रकार के विवाह बताये गये हैं।¹⁶

विवाह के आठ प्रकारों ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच विवाह में प्रथम चार विवाहों को श्रेष्ठ एवं प्रशस्त और अन्य चार विवाहों को अप्रशस्त बताया गया है।

ब्राह्म विवाह - विवाह के आठों प्रकारों में ब्राह्म विवाह को सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वोत्तम कोटि का विवाह बताया गया है। आश्वलायन गृह्यसूत्र के अनुसार, जिस विवाह में कन्या का भलीभांति अलंकृत करके उदकपूर्वक दान दिया जाता है, वह ब्राह्म विवाह कहलाता है। उस कन्या से उत्पन्न सन्तान माता और पिता दोनों के कुलों को बारह पीढ़ी पूर्व तक तथा बारह पीढ़ी बाद तक पवित्र करती है।

अलंकृत्य कन्यां उदकपूर्वा दद्यादेशो ब्राह्मविवाहः ।

तस्यां जातो द्वादश वरान्द्वादशपरान्पुनात्युभयतः । ।¹⁷

मनु ने बताया है कि वेद पढ़े हुए सदाचारी को स्वयं बुलाकर उसकी पूजा करके तथा वस्त्रादि से दोनों को अलंकृत कर कन्या का दान करना 'ब्राह्म विवाह' है।

आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम् ।

आहूयदानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः । ।¹⁸

याज्ञवल्क्य के अनुसार, जिसमें वर को बुलाकर यथाशक्ति वस्त्राभूषणादि से अलंकृत करके कन्या दान की जाती है, वह 'ब्राह्म विवाह' है।

ब्राह्मो विवाह आहूय दीयते शक्त्यलंकृतः ।¹⁹

दैव विवाह - आश्वलायन के अनुसार, यज्ञकर्म में प्रवृत्त ऋत्विज् को दानस्वरूप अलंकृत कन्या प्रदान करना, 'दैव विवाह' कहलाता है। उस कन्या से उत्पन्न सन्तान माता और पिता दोनों के कुलों को दस पीढ़ी पूर्व तक तथा दस पीढ़ी बाद तक पवित्र करती है।

“ऋत्विजे वितते कर्माणि दद्यात् अलंकृत्य सं देवो दशावरान्दश परान्पुनात्युभयतः”²⁰

मनु ने यज्ञानुष्ठान में ऋत्विज द्वारा यज्ञकर्म किये जाने पर दक्षिणा स्वरूप अलंकृत कन्यादान 'दैव विवाह' बताया है। चूंकि यज्ञादि कार्य देव सम्बन्धी हैं, अतएव उन कार्यों के सम्पन्न होने के अवसर पर अपनी कन्या का विवाह ऋत्विज से करना दैव विवाह कहलाता है।

“यज्ञेतु वितते सम्यगृत्विजे कर्म कुर्वते ।

अलंकृत्यसुतादानं देवं धर्मं प्रचक्षते” ।।²¹

प्राजापत्य विवाह - आश्वलायन के अनुसार, सहधर्मचरत कहकर कन्या का दान करना प्राजापत्य विवाह कहलाता है। उस कन्या से उत्पन्न सन्तान माता और पिता दोनों के कुलों को आठ पीढ़ी पूर्व तक और आठ पीढ़ी बाद तक पवित्र करती है।

“सहधर्म चरत इति प्राजापत्योऽष्टपरानष्ट परान्पुनात्युभयतः”²²

प्राजापत्य शब्द का अर्थ है-प्राजापति अर्थात् ब्रह्मा से सम्बन्धित। अर्थात् इस विवाह का उद्देश्य है- ब्रह्मा की सृष्टि में सहायता, वंश-परम्परा का निर्वाह करना।

आर्ष विवाह - आश्वलायन के मतानुसार, जब कन्या के पिता को गो-मिथुन प्रदान कर कन्या ग्रहण की जाती है, वह आर्ष विवाह कहलाता है। इस कन्या से उत्पन्न सन्तान माता और पिता दोनों के कुलों को सात पीढ़ी पूर्व तक और सात पीढ़ी बाद तक पवित्र करती है।

“गोमिथुनं दत्वोपयच्छेत् स आर्षः सप्तवरान्सप्तपरान्पुनात्युभयतः”²³

मनु ने बताया है कि इस विवाह में गौ का एक अथवा दो जोड़ा धार्मिक कार्यों के लिए कन्या का पिता वर के पिता से ग्रहण करता है तथा अपनी कन्या को पुरे विधि-विधान से वर को प्रदान करता है।

“एकं गोमिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः ।

कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते” ।।²⁴

गान्धर्व विवाह - आश्वलायन के अनुसार, परस्पर अनुरक्त अर्थात् 'त्वं मम भार्या भव अहं तव भर्ता भवामि' ऐसा कहकर जब कन्या ग्रहण की जाती है वह गान्धर्व विवाह कहलाता है।

“मिथः समयं कृत्वोपयच्छेत् स गान्धर्वः”²⁵

जब वर तथा कन्या स्वयं की इच्छा से परस्पर मिलते हैं और काम के वशीभूत होकर विवाह करते हैं, तब वह गान्धर्व विवाह कहलाता है।

“इच्छयाऽन्योन्यसंयोगः कन्यायाश्च वरस्य च ।

गान्धर्वः स तु विज्ञेयो मैथुन्यः कामसम्भवः”²⁶

संस्कृत के महाकाव्यों में अनेक गान्धर्व विवाहों का उल्लेख मिलता है। जैसे दुष्यन्त- शकुन्तला, पुरुरवा- उर्वशी, उदयन- वासवदत्ता, चन्द्रापीड- कादम्बरी एवं पुण्डरीक- महाश्वेता आदि का विवाह, गान्धर्व विवाह के अंतर्गत ही आता है।

आसुर विवाह - आश्वलायन गृह्यसूत्र में बताया गया है कि कन्या के पिता को धन द्वारा संतुष्ट करके जो कन्या ग्रहण की जाती है, वह आसुर विवाह कहलाता है।

“धनेनोपतोष्योपयच्छेत् सा आसुरः”²⁷

मनु के अनुसार, वर की जाति वाली तथा कन्या के लिए यथाशक्ति धन देकर स्वेच्छा से कन्या को दान करना आसुर विवाह कहलाता है।

“ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्त्वा कन्यायाई चैव शक्तिः ।

कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्म उच्यते”²⁸

बौधायन ने धन देकर खरीदी गयी कन्या को वैध नहीं माना है। जो व्यक्ति धन के लोभ में कन्यादान करते हैं, वे अपनी बिक्री करते हैं और महापापी होते हैं। वे नरक में जाते हैं तथा अपनी सात पीढ़ियों के पुण्य भी नष्ट कर देते हैं।

“शुल्केन ये प्रयच्छन्ति स्वसुतां लोभमोहिताः ।

आत्मविक्रयिणः पापा महाकिल्बिषकारकाः ।

पतन्ति निरये घोरे घ्नन्ति चा सप्तकुलम्”²⁹

महाभारत में भी भीष्म ने इस विवाह की निंदा की है।

पञ्चानां तु त्रयो धर्माः द्वावधर्म्यो युधिष्ठिर ।

पैशाचश्चासुरश्चैव न कर्तव्यो कथञ्चन ॥³⁰

राक्षस विवाह - आश्वलायन गृह्यसूत्र के अनुसार, मारकर अथवा शिर आदि का छेदन करके रुलाते हुए अथवा रोती हुई कन्या का अपहरण करके विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है।

“हत्वाभित्वा च शीर्षाणि रुदतीं रुद्यभ्यो हरेत्स राक्षसः”³¹

बलपूर्वक युद्ध के माध्यम से कन्या का अपहरण कर विवाह करना राक्षस विवाह कहा गया है। मनु ने बताया है कि कन्या पक्ष की हत्या कर, रोती- चिल्लाती हुई कन्या को बलात् उठा ले जाकर, उससे विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है।

“हत्वा छित्वा च मितवा च क्रोशन्ती रुदतीं गृहात्

प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते”³²

इस विवाह में निहित क्रूरता के कारण ही इस विवाह को राक्षस विवाह की संज्ञा दी गयी है।

पैशाच विवाह - आश्वलायन ने सोती हुई अथवा असावधान कन्या का अपहरण करके जो विवाह होता है, उसे पैशाच विवाह बताया है।

“सुप्तानां प्रमत्तानां वाऽपहरेत्स पैशाचः”³³

मनु के अनुसार, सोती हुई, अचेत, पागल अथवा मदिरापान की हुई कन्या को एकांत में पाकर उसे दूषित कर उससे विवाह करना पैशाच विवाह कहलाता है। सभी विवाहों में यह अत्यन्त नीच अथवा अधम कोटि का विवाह है।

“सुप्तां मत्तां प्रमत्तां वा रहो यात्रोपगच्छति ।

स पापिष्ठो विवाहानां पैशाचश्चाष्टमोऽधमः”³⁴

याज्ञवल्क्य ने छल पूर्वक कन्या से विवाह करने को पैशाच विवाह बताया है।

“पैशाचः कन्यकाच्छलात्”³⁵

आठों प्रकार के विवाह में यह विवाह सबसे निकृष्ट कोटि का माना गया है।

निष्कर्ष

संस्कार प्राचीन भारतीय समाज एवं संस्कृति के प्राणतत्व हैं। संस्कार अभ्युदय और निःश्रेयस, विद्या- अविद्या, लोक- शास्त्र, इहलोक- परलोक आदि की सिद्धि एवं पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति का मार्ग है। विवाह एक पवित्र तथा विलक्षण धर्मकृत्य है, जिसका उद्देश्य केवल भौतिक सुख की प्राप्ति ही नहीं है अपितु संतानोत्पत्ति के साथ देवयाग एवं पितृयाग की पवित्र परम्परा का निर्वाह करना भी है।

सन्दर्भ सूची

1. व्यास स्मृति, 1/13-15
2. शब्द कल्पद्रुम- चतुर्थ कांड, पृ० सं 427
3. ताण्ड्य ब्राह्मण- 7/1/10
4. हेमचन्द्र शब्दानुशासन- 2/4/51-52
5. ऋग्वेद- 10/85/36, 5/3/2
6. बृहदारण्यकोपनिषद्- 1/4/1-3
7. वाल्मीकी रामायण- 2/39/29
8. हिन्दू संस्कार, पृ०- 195, तैत्तिरीय ब्राह्मण- 2/2/2/6
9. हिन्दू संस्कार, पृ०- 196, तैत्तिरीय ब्राह्मण- 2/9/4/7 ‘अथो अद्रधोवा एव आत्मनः यत् पत्नी’
10. तैत्तिरीय संहिता- 6/3/10/5
11. मनुस्मृति- 3/20
12. मनुस्मृति- 3/21
13. गौतम धर्मसूत्र- 1/4/4-11
14. आपस्तम्ब धर्मसूत्र- 2/5/11/17-20, 2/5/2/1-2
15. याज्ञवल्क्य स्मृति- 1/58-61
16. बौधायन धर्मसूत्र- 1/11
17. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
18. मनुस्मृति- 3/2
19. याज्ञवल्क्य स्मृति- 1/57
20. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
21. मनुस्मृति- 3/28
22. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
23. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
24. मनुस्मृति- 3/29
25. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
26. मनुस्मृति- 3/32
27. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
28. मनुस्मृति- 3/31
29. बौधायन धर्मसूत्र- 1/11/20-21

30. महाभारत- 13/44/9
31. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
32. मनुस्मृति- 3/33
33. आश्वलायन गृह्यसूत्र- 1/6/1
34. मनुस्मृति- 3/34
35. याज्ञवल्क्य स्मृति- 1/61